अर्द्ध-विकसित अर्थ-व्यवस्था की विशेषताएँ या लक्षण
(Characteristics of Under-developed Economies)

अर्द्ध-विकसित विश्व विभिन्न प्रकार के देशों का समूह है। इन देशों की अर्थ-व्यवस्था में विभिन्न प्रकार के अन्तर पाए जाते हैं। किन्तु इतना सब होते हुए भी इन अर्द्ध-विकसित देशों में एक आधारभूत समानता पाई जाती है। यद्यपि किसी एक देश को प्रतिनिधि अर्द्ध-विकसित देश की संज्ञा देना कठिन है, किन्तु फिर भी कुछ ऐसे सामान्य लक्षणों को बताना सम्भव है जो कई अर्द्ध-विकसित देशों में आमतौर से पाए जाते हैं। यद्यपि ये सामान्य लक्षण सब अर्द्ध-विकसित देशों में समान अंशों में नहीं पाए जाते और न केवल ये ही अर्द्ध-विकसित देशों के लक्षण होते हैं, किन्तु ये

Scanned by CamScanner

सब मिलकर एक अर्द्ध-विकसित अर्थ-व्यवस्था को बनाने में समर्थ हैं। अर्द्ध-विकसित देशों के इन लक्षणों को मुख्यतः निम्नलिखित वर्गों में विभाजित करके अध्ययन किया जा सकता है—

(अ) आर्थिक लक्षण
(ब) जनसंख्या सम्बन्धी लक्षण
(स) सामाजिक विशेषताएँ
(द) तकनीकी विशेषताएँ
(इ) राजनीतिक विशेषताएँ

(अ) आर्थिक लक्षण
(Economic Characteristics)

आर्थिक लक्षणों में निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं—

1. अर्द्ध-विकसित प्राकृतिक साधन (Under-developed Natural Resources)—अर्द्ध-विकसित देशों का एक प्रमुख लक्षण इनके साधनों का अर्द्ध-विकसित होना है। इन देशों में यद्यपि ये साधन पर्याप्त मात्रा में होते हैं, किन्तु पूँजी और तकनीकी ज्ञान से अभाव तथा अन्य कारणों से इन साधनों का देश के विकास के लिए पर्याप्त और उचित विदोहन नहीं किया गया होता है। उदाहरणार्थ एशिया, अफ्रीका, लेटिन अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया एवं द्वीप समूहों में बहुत बड़ी मात्रा में भूमि संसाधन अप्रयुक्त पड़े हुए हैं। श्री केलोग (Kellog) के अनुसार, उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका, अफ्रीका तथा न्यूगायना, मेडागास्कर, बोर्नियो आदि द्वीपों की कम से कम 20% अप्रयुक्त भूमि कृषि योग्य है जिसका कृषि कार्यों में उपयोग करके विश्व की कृषि भूमि में एक बिलियन एकड़ अतिरिक्त भूमि की वृद्धि की जा सकती है। प्रो. बोन द्वारा कुछ वर्षों पूर्व किए गए मध्यपूर्व के आठ देशों के सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि इन देशों के कुल 118 मिलियन हैक्टेयर कृषि योग्य भूमि में से केवल एक तिहाई से भी कम भूमि में कृषि की जाती थी और 85 मिलियन एकड़ कृषि योग्य भूमि बेकार पड़ी हुई थी। श्री कालिन क्लार्क ने बतलाया है कि विश्व की वर्तमान कृषि योग्य भूमि से उपभोग और कृषि के डेनिश स्टेण्डर्ड के अनुसार 12,000 मिलियन व्यक्तियों का निर्वाह किया जा सकता है जबकि वर्तमान में केवल 2,300 मिलियन लोगों का ही निर्वाह किया जा रहा है। स्पष्टतः भूमि के ये अप्रयुक्त साधन अधिकांश में अर्द्ध-विकसित देशों में ही हैं।

इसी प्रकार अर्द्ध-विकसित देशों में खनिज एवं शक्ति के साधनों की सम्पन्नता है, किन्तु यहाँ इनका विकास नहीं किया गया है। अकेले अफ्रीका में विश्व की सम्भावित (Potential) जल-शक्ति के 44% साधन हैं; किन्तु यह महाद्वीप केवल 0·1% जल-साधनों का ही उपयोग कर रहा है। श्री वोयटिन्सकी और वोयटिन्सकी के अनुसार एशिया, मध्य अमेरिका और दक्षिणी अमेरिका भी अपने जल-विद्युत साधनों के क्रमशः केवल 13%, 5% और 3% भाग का ही उपयोग कर रहे हैं। इसी प्रकार अफ्रीका में ताँबा, टिन और सोने के तथा एशिया में पेट्रोल, लोहा, टिन और बाक्साइट आदि

Scanned by CamScanner

के अपार भण्डार हैं, किन्तु इनका भी पूरा विदोहन नहीं किया जा रहा है। इसी प्रकार बर्मा, थाईलैण्ड, इण्डोचीन तथा अफ्रीका, एशिया और लेटिन अमेरिकी देशों की वन सम्पत्ति का उपयोग नहीं किया गया है या साम्राज्यवादी शासकों द्वारा शासक देशों के हित के कारण दुरुपयोग किया गया है।

भारत में भी उसके खनिज सम्पत्ति, जल-साधन, भूमि-साधन पर्याप्त मात्रा में हैं, किन्तु उनका पर्याप्त विकास और उचित विदोहन नहीं किया गया है। उदाहरणार्थ, भारत में आज भी 9 करोड़ एकड़ से भी अधिक कृषि योग्य बंजर भूमि है और इसकी जल-शक्ति सम्भाव्यता लगभग 410 लाख किलोवाट आँकी गई है किन्तु लगभग 10 प्रतिशत भाग ही अभी तक उपयोग में लाया जा सका है। भारत में विश्व में उपलब्ध लोहे का लगभग 25 प्रतिशत अर्थात् 2,160 करोड़ टन लोह भण्डार होने का अनुमान है जबकि यहाँ लोहे का वार्षिक खनन लगभग 1·70 करोड़ टन से कुछ ही अधिक है। इसी प्रकार सन् 1951 तक देश में सिंचाई के लिए उपलब्ध जल का केवल 17 प्रतिशत और कुल जल-प्रवाह का केवल 5·6 प्रतिशत ही उपयोग में लाया जा रहा था और 31 मार्च, 1970 तक भी सिंचाई के लिए उपलब्ध जल का केवल 39 प्रतिशत ही उपयोग में था जिसमें सन् 1980 की समाप्ति तक कुछ ही प्रतिशत वृद्धि हुई है। भारत में अब नदियों के पानी को सिंचाई की नहरों में डालने की सारी सम्भावनाएँ प्रायः समाप्त हो चुकी हैं। इसलिए भविष्य में सिंचाई का विकास करने की योजनाओं का उद्देश्य बरसात के अतिरिक्त जल को बाँध बना कर संग्रहित करना है जिससे सूखे के दिनों उसका उपयोग किया जा सके तथा छोटी सिंचाई कार्यक्रमों के अन्तर्गत भूमिगत जल के उपयोग का विकास करना है।

2. कृषि की प्रधानता और उसकी निम्न उत्पादकता (Importance of Agriculture & Its Low Productivity)—अर्द्ध-विकसित और विकासशील देशों में दो-तिहाई या इससे भी अधिक लोग प्रायः ग्रमीण क्षेत्रों में रहते हैं और कृषि उनका मुख्य व्यवसाय है। उन्नत देशों में जितने लोग कृषि करते हैं, अर्द्ध-विकसित देशों में उससे प्रायः चार गुना अधिक लोग कृषि में लगे होते हैं। जहाँ अमेरिका, कनाड़ा और पश्चिमी जर्मनी जैसे विकसित देशों में कृषि में लगी जनसंख्या का प्रतिशत क्रमशः 3·6 और 5 है वहाँ कीनिया, सूडान, थाईलैण्ड, वियतनाम, बंगला देश, पाकिस्तान आदि अर्द्ध-विकसित देशों में साधारणतया 65 से 85 प्रतिशत लोग अपनी आजीविका के लिए कृषि और उससे सम्बन्धित उद्योगों पर आश्रित हैं। हम भारत ही को लें तो यहाँ आज भी लगभग 75 प्रतिशत लोग कृषि क्षेत्र पर आश्रित हैं। कृषि में इतना अधिक संकेन्द्रण (Concentration) दरिद्रता का सूचक है। अर्द्ध-विकसित देशों में राष्ट्रीय आय का लगभग आधा या इससे भी अधिक भाग कृषि से प्राप्त होता है। भारत में यही स्थिति है कि जहाँ कृषि-क्षेत्र से लगभग 50 प्रतिशत राष्ट्रीय आय होती है। प्रमुख उत्पादन खाद्य सामग्री और कच्चा माल रहता है। कृषि वैज्ञानिक नहीं है, बहुत अधिक पिछड़ेपन की शिकार है। प्रमुख व्यवसाय के रूप में अर्द्ध-विकसित देशों में कृषि अधिकतर अनुत्पादक है। कृषि पुराने

Scanned by CamScanner

3. औद्योगीकरण का अभाव (Lack of Industrialisation)—इस अर्द्ध-विकसित देशों का एक प्रमुख लक्षण यह है कि इनमें आधुनिक ढंग के बड़े पैमाने के उद्योगों का अभाव रहता है। यद्यपि इन देशों में उपभोक्ता वस्तुओं के उद्योग तो यत्र-तत्र स्थापित होने लगते हैं, किन्तु आधारभूत उद्योगों जैसे मशीन, यन्त्र, उत्पादन आदि उद्योगों का लगभग अभाव रहता है और शेष उद्योगों के लिए भी ये मशीन आदि के लिए आयात पर निर्भर होते हैं। विकसित देशों में जबकि आधुनिक उद्योगों की बड़े पैमाने पर स्थापना होती है वहाँ ये देश मुख्यतः प्राथमिक उत्पादन में ही लगे रहते हैं। कुछ अर्द्ध-विकसित देशों में इन प्राथमिक व्यवसायों का उदाहरण खान खोदना है। द्वितीय महायुद्ध के पूर्व विश्व में टिन उत्पादन में महत्त्व के क्रम में मलाया, इण्डोनेशिया, बोलेविया, श्याम और चीन थे और ये सभी देश अर्द्ध-विकसित हैं। एशिया और दक्षिणी अमेरिका महाद्वीपों में विश्व के 58% टंगस्टन और 44% ताँबे का उत्पादन होता है। एशिया और अफ्रीका में विश्व का 52% मैगनीज और 61% क्रोमाइट का उत्पादन होता है। एशिया महाद्वीप से विश्व के पेट्रोल का एक-तिहाई भाग और दक्षिणी अमेरिका से 16% प्राप्त होता है। इस प्रकार इन अर्द्ध-विकसित देशों में प्राथमिक व्यवसायों में ही अधिकाँश जनसंख्या नियोजित रहती है और औद्योगिक उत्पादन का अभाव रहता है। निम्न तालिका से आर्थिक विकास और औद्योगीकरण का धनात्मक सह-सम्बन्ध स्पष्ट होता है—

राष्ट्रीय आय में विभिन्न क्षेत्रों का योगदान[1]

प्रति व्यक्ति आय वर्ग	कुल राष्ट्रीय धन का प्रतिशत			
	प्राथमिक उत्पादन	उद्योग	सेवाएँ	कुल
125 डॉलर से कम आय वाले देश	47	19	33	100
125 से 249 डॉलर आय वाले देश	40	25	35	100
250 से 374 डॉलर आय वाले देश	30	26	45	100
375 या अधिक डॉलर आय वाले देश	27	28	46	100
अधिक आय वाले विकसित देश	13	49	30	100

आधुनिक युग में किसी देश के औद्योगीकरण में शक्ति के साधनों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान होता है और प्रति व्यक्ति विद्युत शक्ति के उपयोग से भी किसी देश के औद्योगिक विकास का अनुमान लगाया जा सकता है। अर्द्ध-विकसित देशों में प्रति व्यक्ति विद्युत शक्ति का उपभोग बहुत कम होता है जो इन देशों में औद्योगीरकण के अभाव का प्रतीक है।

4. प्रति व्यक्ति आय का निम्न स्तर (Low level of Per Capita Income)—अर्द्ध-विकसित अथवा विकासमान देशों का एक प्रमुख लक्षण इनकी निर्धनता अथवा सामान्य दरिद्रता है जो प्रति व्यक्ति आय के निम्न स्तर में झलकती है। इस दृष्टि से विकसित और अर्द्ध-विकसित देशों में जमीन-आसमान का अन्तर

1 Source : U. N. World Economic S

Scanned by CamScanner

अर्द्ध-विकसित देशों में जितनी अधिक दरिद्रता पाई जाती है, उसकी ओर संकेत करते हुए सन् 1964 में जिनेवा में वाणिज्य एवं विकास सम्बन्धी संयुक्त राष्ट्रसंघ के सम्मेलन में अपने भाषण में कीनिया के प्रतिनिधि वाणिज्य तथा उद्योग मन्त्री जे. जी. कियानो ने जो कुछ कहा था, वह आज सन् 1981 में भी यथार्थ स्थिति को चित्रित करता है। श्री कियानो ने कहा था कि —"सैद्धान्तिक रिपोर्टों और अर्थशास्त्र सम्बन्धी पाठ्य-पुस्तकों में विकासमान देशों में प्रति व्यक्ति वार्षिक आय 30 डॉलर, 60 डॉलर, यहाँ तक कि 100 डॉलर बताई जाती है, परन्तु विकासमान देशों के लाखों लोग वस्तुत: जिन विषम परिस्थितियों का सामना कर रहे हैं, वे इन आँकड़ों से प्रगट नहीं होतीं। उनमें बहुत से ऐसे व्यक्ति हैं, जिनकी कोई आय नहीं हैं। वे नहीं जानते कि कल उन्हें खाना नसीब होगा या नहीं, अथवा रात में वे कहाँ सोएँगे। पाठ्य-पुस्तकों में उद्धृत प्रति व्यक्ति आय में उनका कोई हिस्सा नहीं होता है।"[2] वक्ता ने यथार्थ का बिलकुल सच्चा चित्र प्रस्तुत किया है, जिससे वास्तविक विषमता की ओर ध्यान आकृष्ट होता है और जिस पर औसत आय सम्बन्धी आँकड़े आवरण डालते हैं।[3]

निम्न जीवन-स्तर और निम्न जीवन-आयु-स्तर (Low Standard of Living and Low Level of Life-age) —आर्थिक विषमता की वास्तविक तस्वीर प्रस्तुत करने वाले अन्य आँकड़ों को लें तो भी पूंजीवादी दुनिया के अति-विकसित

1 यू. जूकोव व अन्य : तीसरी दुनिया, पृष्ठ 112.
2 Proceeding of the United Nations Conference on Trade and Development, Genvea, March 23—Time 16, 1964, Vol. II, Policy Statements, p. 251. (तीसरी दुनिया से उद्धृत)
3 यू. जुकोव एवं अन्य : तीसरी दुनिया, पृष्ठ 112.

Scanned by CamScanner

5. पूँजी की कमी (Deficiency of Capital)— अर्द्ध-विकसित देशों की अर्थ-व्यवस्थाएँ पूंजी में निर्धन (Capital Poor) और कम बचत और विनियोग करने वाली (Low Saving and Low Investing) होती हैं। देश के साधनों के उचित उपयोग नहीं होने और साधनों के अविकसित होने के कारण पर्याप्त मात्रा में उत्पादन के साधनों का सृजन नहीं हो पाता और साथ ही इसी कारण वहाँ की पूंजी की मात्रा वर्तमान तकनीकी ज्ञान के स्तर पर साधनों के उपयोग और आर्थिक विकास की आवश्यकताओं से बहुत कम होती है। किन्तु इन देशों में न केवल पूंजी की ही कमी होती है अपितु पूंजी निर्माण की दर (Rate of Capital Formation) भी बहुत निम्न होती है। इन अर्द्ध-विकसित देशों में आय का स्तर बहुत नीचा होता है अतः बचत की मात्रा भी कम होती है। स्वाभाविक रूप से बचत की मात्रा कम होने का परिणाम कम विनियोग और कम पूंजी निर्माण होता है। इन अर्द्ध-विकसित देशों में उपभोग की प्रवृत्ति (Propencity to Consume) अधिक होती है और आर्थिक विकास के प्रयत्नों के फलस्वरूप आय में जो वृद्धि होती है उसका अधिकांश भाग उपभोग पर व्यय कर दिया जाता है। बढ़ी हुई आय में से बचत की मात्रा नहीं बढ़ने का एक कारण जैसा कि श्री नर्कसे ने बतलाया है प्रदर्शनात्मक प्रभाव (Demonstration effect) है जिसके अनुसार व्यक्ति अपने समृद्धशाली पड़ोसी के जीवन-स्तर को अपनाने का प्रयास करते हैं। इसके साथ ही इन देशों में जनसंख्या में वृद्धि होती रहती है। इन सब कारणों से उत्पादन के लिए उपलब्ध घरेलू बचतें बहुत कम होती हैं। डॉ. श्रोन की गणना के अनुसार भारत के ग्रामीण क्षेत्रों की 90% जनसंख्या के पास व्यय के ऊपर आय का कोई आधिक्य नहीं होता।

इस प्रकार अर्द्ध-विकसित देशों में बचत की दर कम होती है जिससे विनियोग के लिए पूँजी प्राप्त नहीं होती। जो कुछ थोड़ी बहुत बचत होती है वह उच्च आय वाले वर्गों में होती है जो इन्हें विदेशी प्रतिभूतियों में विनियोजित करना चाहते हैं जिनमें जोखिम कम होती है। अर्द्ध-विकसित देशों की विनियोग की आवश्यकताओं की इस कमी को विदेशी पूँजी के द्वारा पूरा करने का प्रयास किया जाता है, किन्तु इन देशों की साख, भुगतान की योग्यता और राजनीतिक स्थिति इस दृष्टि से बहुत उत्साहवर्द्धक नहीं होती। अतः अर्द्ध-विकसित देशों में पूँजी निर्माण की दर 5–6% होती है। इसके विपरीत विकसित देशों में कुल राष्ट्रीय आय के 15 से 20% तक कुल विनियोग होता है। श्री कालिन क्लार्क के कुछ वर्षों पूर्व के एक अध्ययन के अनुसार संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और पश्चिमी यूरोप के देशों में पूँजी निर्माण की दर 15 से 18%, स्वेडन में 17%, नार्वे में 25% थी जबकि यह भारत में केवल 6% थी।

6. निर्यात पर निर्भरता और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की प्रतिकूलता— अर्द्ध-विकसित देशों का एक प्रमुख लक्षण निर्यातों पर उनकी अत्यधिक निर्भरता है। अधिकांश पिछड़े देशों से कच्चा माल भारी मात्रा में निर्यात किया जाता है।

Scanned by CamScanner

यू. जूकोव के अनुसार, "अधिकाँश देश विश्व-मण्डियों में अपनी कृषि उपज बेचते हैं और औद्योगिक माल खरीदते हैं।" सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी के सदस्य यू. जूकोव और उनके सह-लेखकों ने अग्रिम तालिका में 24 देशों के नाम सम्मिलित किए हैं जो उपनिवेश अथवा अर्द्ध-उपनिवेश रह चुके हैं पर आज स्वाधीन हैं अर्थात् जो अर्द्ध-विकसित देशों की पंक्तियों में हैं। इनमें से प्रत्येक के सामने ऐसी वस्तु का उत्पादन सम्बन्धी आँकड़ा प्रस्तुत किया गया है, जिसका उसकी अर्थ-व्यवस्था में विशेष महत्त्व है। देश के निर्यात तथा राष्ट्रीय आय में भी उसका हिस्सा दिखाया गया है। इन आँकड़ों से यह पुष्टि होती है कि इन देशों का आर्थिक ढाँचा अधिकाँशतः एक ही फसल पैदा करने वाला एकाँगी है। साथ ही इन आँकड़ों से तीसरी दुनिया के अर्द्ध-विकसित देशों तथा औद्योगिक दृष्टि से समृद्ध विकसित पूँजीवादी देशों के बीच वर्तमान सम्बन्धों के आर्थिक ढाँचे के एक पहलू पर भी प्रकाश पड़ता है और हमें पता चलता है कि दोनों को पृथक् करने वाली आर्थिक खाई चौड़ी होती जा रही है।

Scanned by CamScanner

भी कार्य किया है।

7. बेरोजगारी, अर्द्ध-बेरोजगारी और छद्मवेषी बेरोजगारी (Unemployment, Under-employment and Disguised Unemployment) — कई अर्द्ध-विकसित देश बहु-जनसंख्या वाले हैं और जनसंख्या वृद्धि की दर भी इनमें अपेक्षाकृत अधिक होती है। दूसरी ओर, इनके साधन अविकसित एवं अपर्याप्त होते हैं। परिणामस्वरूप इन देशों में बहुत से व्यक्तियों को उपयुक्त कार्य नहीं मिल पाता और बेरोजगार तथा अर्द्ध-बेरोजगार होते हैं। बावर एवं यामे के अनुसार, "अकुशल श्रमिकों की व्यापक बेरोजगारी और अर्द्ध-बेरोजगारी पिछड़ी हुई अर्थ-व्यवस्थाओं की एक उल्लेखनीय विशेषता होती है। कई व्यक्ति अनियोजित या अर्द्ध-नियोजित केवल इसलिए नहीं होते कि वे कार्य करना पसन्द नहीं करते, बल्कि इसलिए कि उन्हें कार्य में लगाने के लिए आवश्यक सहयोगी उत्पादन के साधन अपर्याप्त होते हैं।" इन देशों में भूमि पर जनसंख्या का भार अधिक होने के कारण जहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी होती है वहाँ छिपी हुई बेरोजगारी (Disguised Unemployment) भी होती है। इसका आशय है, भूमि पर आवश्यकता से अधिक आदमी कार्यरत रहते हैं।

Scanned by CamScanner

में वृद्धि हुई ।
भी कार्य किया है ।

7. बेरोजगारी, अर्द्ध-बेरोजगारी और छद्मवेषी बेरोजगारी (Unemployment, Under-employment and Disguised Unemployment) — कई अर्द्ध-विकसित देश बहु-जनसंख्या वाले हैं और जनसंख्या वृद्धि की दर भी इनमें अपेक्षाकृत अधिक होती है । दूसरी ओर, इनके साधन अविकसित एवं अपर्याप्त होते हैं । परिणामस्वरूप इन देशों में बहुत से व्यक्तियों को उपयुक्त कार्य नहीं मिल पाता और बेरोजगार तथा अर्द्ध-बेरोजगार होते हैं । बावर एवं यामे के अनुसार, "अकुशल श्रमिकों की व्यापक बेरोजगारी और अर्द्ध-बेरोजगारी पिछड़ी हुई अर्थ-व्यवस्थाओं की एक उल्लेखनीय विशेषता होती है । कई व्यक्ति अनियोजित या अर्द्ध-नियोजित केवल इसलिए नहीं होते कि वे कार्य करना पसन्द नहीं करते, बल्कि इसलिए कि उन्हें कार्य में लगाने के लिए आवश्यक सहयोगी उत्पादन के साधन अपर्याप्त होते हैं ।" इन देशों में भूमि पर जनसंख्या का भार अधिक होने के कारण जहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी होती है वहाँ छिपी हुई बेरोजगारी (Disguised Unemployment) भी होती है । इसका आशय है, भूमि पर आवश्यकता से अधिक आदमी कार्यरत रहते हैं ।

अर्द्ध-विकसित देशों में शिक्षा और नागरीकरण के साथ शहरी बेरोजगारी बढ़ती जा रही है । औद्योगिक क्षेत्र का प्रसार श्रम-शक्ति में वृद्धि के अनुपात में नहीं हो रहा है, फलस्वरूप शहरी बेरोजगारी फैल रही है । प्रभावी मानव-शक्ति नियोजन के अभाव तथा संरचनात्मक कठोरता के कारण शिक्षित लोगों को नौकरियाँ भी नहीं मिल पाती हैं । एक अध्ययन के अनुसार अर्द्ध-विकसित देशों में शहरी जनसंख्या में औसतन 4·5 से 5 प्रतिशत वार्षिक दर से वृद्धि होने के कारण शहरी क्षेत्रों में श्रम-शक्ति का 20 से 25 प्रतिशत भाग बेरोजगारी से ग्रस्त है । जहाँ तक प्रछन्न बेरोजगारी का प्रश्न है, इसकी मात्रात्मक माप कठिन है, तथापि अधिकाँश अर्थशास्त्री

Scanned by CamScanner

8. आर्थिक कुचक्रों की उपस्थिति (Presence of Vicious Circles)— अर्द्ध-विकसित देशों में आर्थिक कुचक्रों के प्रभाव के कारण 'एक देश निर्धन है क्योंकि यह निर्धन है' (A country is poor because it is poor) वाली श्री नर्कसे की उक्ति चरितार्थ होती है। इन देशों में अर्द्ध-विकसित साधनों, पूँजी का अभाव, बाजार की अपूर्णताएँ, तकनीकी ज्ञान का निम्न स्तर होने के कारण अर्थ-व्यवस्था की उत्पादकता (Productivity) कम होती है। कम उत्पादकता के कारण आय का स्तर नीचा होता है। जिससे बचत दर और परिणामस्वरूप विनियोग दर कम होती है। फलस्वरूप उत्पादकता भी कम होती है और इसी प्रकार यह क्रम चलता रहता है।

9. बाजार की अपूर्णताएँ (Imperfections of the Market)— डॉ. डी. एस. नाग के अनुसार "आर्थिक गत्यात्मकता में साधनों के अनुकूलतम आवंटन और राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में अधिकतम उत्पादक क्षमता प्राप्त करने की प्रवृत्ति होती है..... किन्तु स्थिर अर्थ-व्यवस्था में कई बाजार की अपूर्णताएँ इसे 'उत्पादन सीमा' (Production Frontier) की ओर बढ़ने से रोकती हैं।" निर्धन देश इस दृष्टिकोण से स्थिर अर्थ-व्यवस्था वाले होते हैं। जाति, धर्म, स्वभाव, प्रवृत्तियों की भिन्नता, निर्धनता, अशिक्षा, यातायात के साधनों का अभाव आदि श्रम की गतिशीलता में बाधा पहुँचाते हैं। इसी प्रकार पूँजी की गतिशीलता भी कम होती है। अर्द्ध-विकसित देशों में साधनों का इस गतिहीनता के अतिरिक्त एकाधिकारिक प्रवृत्तियाँ, देश-विदेश के बाजारों का ज्ञान नहीं होना, बेलोच आर्थिक ढाँचा, विशिष्टीकरण का अभाव, पिछड़ी हुई समाज व्यवस्था आदि के कारण साधनों का सन्तुलित और उचित

Scanned by CamScanner

आवंटन नहीं हो पाता है। अर्थ-व्वयस्था गतिहीन होती है जिससे इसके विभिन्न क्षेत्र के मूल्य आय के प्रति संवेदनशील नहीं होते। इस प्रकार साधनों का असन्तुलित संयोग, अर्द्ध-विकसित देशों के अर्द्ध-विकास का कारण होता है।

10. आर्थिक विषमता (Economic Disparities)—अर्द्ध-विकसित देशों में व्यापक रूप में धन और आय की विषमता तथा उन्नति के अवसरों की असमानता पाई जाती है। देश की अधिकाँश सम्पत्ति, आय और उत्पत्ति के साधनों पर एक छोटे से समृद्ध वर्ग का अधिकार होता है जबकि देश के बहुत बड़े निर्धन वर्ग को आय का थोड़ा सा भाग प्राप्त होता है। इसी प्रकार प्रगति के अवसर भी योग्यता की अपेक्षा जाति और आर्थिक क्षमता पर निर्भर करते हैं। धनिक वर्ग में बचत क्षमता अधिक होती है जिसके द्वारा और अधिक धन कमाने के साधन इनके हाथ में आते जाते हैं। निर्धन वर्ग को लाभ पहुँचाने वाले कार्यों जैसे, सामाजिक सुरक्षा, समाज सेवाओं, श्रम-संघों, प्रगतिशील करारोपण आदि संस्थाएँ अधिक विकसित नहीं होती हैं। परिणामस्वरूप, इन निर्धन देशों में धनी देशों की अपेक्षा व्यापक आर्थिक

Scanned by CamScanner